11

प्राथमिक शालाएँ शैक्षिक शोध की उर्वर भूमि

पवन सिन्हा*

शिक्षा के क्षेत्र में जिस तरह के परिवर्तन की चर्चा अकसर होती रहती है और उन चर्चाओं में जिस तरह के सरोकार व्यक्त किए जाते हैं, वे शैक्षिक शोध की उर्वर भूमि का कार्य करते हैं। जो आज है, वह कल नहीं था और जो आज है वह कल नहीं होगा। इस सिद्धांत को गहराई से देखें तो कहा जा सकता है कि परिवर्तन की राह को अग्रसर करने में शोध की अपनी महत्ती भूमिका है। परिवर्तन का कलेवर भी उसी शैक्षिक शोध का परिणाम है। लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले शोध स्वयं के 'घर' अर्थात कक्षायी जगत में कितने कारगर या उपयोगी होते हैं, यह तय करना कठिन नहीं है। अनेक शोध ऐसे होते हैं जो अभी हाल-फिलहाल के शैक्षिक परिवर्तन की उपज होते हैं तो कुछ शोध ऐसे होते हैं जो वर्षों के चिंतन, परिवर्तन या समाधान के लिए चिंतित सोच, छटपटाहट का परिणाम होते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में शिक्षा के लिए उपयोगी और शिक्षा की गुणवत्ता के संवर्धन हेतु शोध को जो स्थान दिया गया है, प्रस्तुत लेख उसी के संदर्भ में प्राथमिक शालाओं को शोध की एक उर्वर भूमि के रूप में विश्लेषित करने का प्रयास है।

सामान्यत: किसी भी अनुशासन की विचार-भूमि और चिंतन-क्षितिज का आधार वह कार्य-भूमि ही होती है जहाँ अवलोकन और उस अवलोकन के आलोचनात्मक विश्लेषण से निष्कर्ष प्राप्त होते हैं। ये निष्कर्ष ही हैं जो और अधिक गहन विश्लेषण और सामान्यीकरण के बाद सिद्धांत रूप में परिणत होते हैं। यह बिंदु शिक्षा-अनुशासन पर भी लागू होता है और हमें शिक्षा के क्षेत्र में किसी भी सिद्धांत को परखने, किसी भी सिद्धांत को गढ़ने के लिए शिक्षा की कर्म भूमि यानी कक्षाओं में जाना होगा। सीखने-सिखाने की प्रक्रिया जिस तरह से कक्षाओं में घटित होती है उसका आलोचनात्मक विश्लेषण ही शिक्षा-शास्त्रीय सिद्धांतों को गढ़ने में मदद करता है। इस अर्थ में बच्चों की शिक्षा से जुड़े सिद्धांतों को खोजने के लिए कक्षाओं को ही परखने की वह पैनी दृष्टि चाहिए जो पुन: बच्चों की शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाने में सहयोग करेगी। इस संदर्भ में अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं, जैसे— कक्षायी भूमि से उपजे सिद्धांत का क्या कोई वैध आधार होगा? क्या उस सिद्धांत को हम समान रूप से सभी बच्चों की शिक्षा पर लागू कर सकते हैं? क्या वह सभी शिक्षकों की समान रूप से मदद करेगा कि वे अपने शिक्षण को बेहतर बना सकें? क्या वह सिद्धांत समान रूप से बच्चों द्वारा किसी ज्ञान राशि को सीखने में मदद करेगा? वस्तुत: इन सवालों के मूल में किसी भी सिद्धांत का सामान्यीकरण का सिद्धांत है और इन सभी प्रश्नों का उत्तर है नहीं-नहीं! किसी

* *एसोसिएट प्रोफ़ेसर*, मोतीलाल नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

© NCERT not to be republished

भी सिद्धांत का पूर्ण रूप से सामान्यीकरण संभव नहीं है और वह समान रूप से सभी को लाभान्वित नहीं करेगा। यदि समस्त प्रश्नों का उत्तर 'नहीं' है तो फिर ये प्रश्न भी उठते हैं— हम बच्चों की शिक्षा के लिए किस सिद्धांत को उपयोगी मानें? क्या बच्चों के सीखने की प्रक्रिया अथवा उनके व्यवहार के तरीकों के बारे में कोई एक राय नहीं बना सकते? इन प्रश्नों से भी एक और अधिक महत्वपूर्ण प्रश्न है हम सिद्धांतों के आधार पर शोध क्यों करते हैं?

यदि हम गहराई से विचार करें और स्वयं के जीवन के संदर्भ में देखें तो क्या यह कह सकते हैं कि हम सभी एक ही तरीके से सीखते हैं। क्या जो विषय एक व्यक्ति को पसंद है, वही विषय दूसरे व्यक्ति को भी पसंद होगा? क्या किसी एक घटना के बारे में दो अलग व्यक्तियों के सोचने और उसकी व्याख्या करने का तरीका समान होगा? इन प्रश्नों का भी यही उत्तर है 'नहीं'। इस 'नहीं' का मूल कारण यह है कि हम सभी 'जैसे हैं' हमारे 'वैसे होने' में हमारे अनुभव, हमारी क्षमताएँ, हमारे परिवेश, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि शामिल होती है और हम सभी मूलत: भिन्न होते हैं। व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धांत ही इन प्रश्नों के उत्तर के रूप में देखा जा सकता है। जब हम दो बड़े व्यक्ति एक जैसे नहीं हैं और हमारी सोच, पसंद, राय एक जैसी नहीं है तो यही सिद्धांत बच्चों के संदर्भ में भी लागू होता है।

शोध, शोध निष्कर्ष और सिद्धांत

जैसा कि पूर्व में यह मुद्दा उठाया गया था कि कोई भी सिद्धांत समान रूप से कार्य नहीं करता या प्रभावी नहीं होता तो इस स्थिति में हम शोध की दृष्टि कैसे विकसित करें और शोधगत निष्कर्षों को कैसे उपयोग में लाएँ? सबसे पहले तो यह समझना ज़रूरी है कि शोध से प्राप्त निष्कर्ष 'अंतिम सत्य' नहीं होते और इसका कारण होता है— भिन्न परिवेश या संदर्भ! एक उदाहरण से इस बात को समझते हैं। मान लीजिए कि हम जीन पियाजे के संज्ञानात्मक विकास सिद्धांत के विषय में पढ़ते हैं कि बच्चे ज्ञान का अर्जन कैसे करते हैं या उनका संज्ञानात्मक विकास कैसे होता है। इस सिद्धांत के अनुसार औपचारिक अमूर्त संक्रियात्मक अवस्था 11–12 वर्ष के बाद की है और इस अवस्था में बच्चों में अनेक क्षमताएँ विकसित होती हैं, जैसे— अमूर्त चिंतन, तार्किक चिंतन, समस्या-समाधान, निर्णय लेना आदि। इस अवस्था में बच्चों की मानसिक योग्यताओं का पूर्ण विकास होता है। जीन पियाजे का यह सिद्धांत उनके द्वारा किए गए शोध का निष्कर्ष है और इस सिद्धांत के आधार पर क्या हम यह कह सकते हैं—

- भारत के शहरी क्षेत्र में रहने वाले 12 या उससे अधिक उम्र वाले सभी बच्चे पियाजे के इस सिद्धांत के अनुरूप समस्त मानसिक योग्यताओं में सक्षम हैं?
- जोखिम भरे क्षेत्रों में रहने वाले बच्चे केवल 12 वर्ष के बाद ही तार्किक चिंतन कर सकते हैं?
- भारत के दूर-दराज़ के आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाले बच्चे केवल 12 वर्ष की उम्र के बाद ही उचित निर्णय ले सकते हैं, उससे पहले नहीं?
- भारत के सभी बच्चे पियाजे के इसी सिद्धांत के अनुसार मानसिक विकास के सभी चरणों से गुज़रते हैं?

इस संदर्भ में और भी प्रश्न हो सकते हैं और उत्तर होगा— 'नहीं'। आखिर क्यों? वह इसलिए, क्योंकि भारत के सभी बच्चे एक जैसे नहीं हैं और

© NCERT not to be republished

सभी बच्चों का परिवेश, स्थितियाँ, अनुभव, समस्याएँ आदि एक जैसी नहीं हैं। यह संभव है कि आदिवासी क्षेत्र में रहने वाले बच्चे 12 वर्ष की उम्र से पहले ही समस्या समाधान की योग्यता रखते हों, क्योंकि उनकी स्थितियाँ अपेक्षाकृत जटिल हैं और वे बच्चे बचपन से ही उन जटिल स्थितियों का सामना करते हों। तो उनमें अपनी जटिल स्थितियों से जूझने की योग्यता 12 वर्ष से पहले ही विकसित हो गई हो और वे किसी अन्य वयस्क के मुकाबले बेहतर क्षमता रखते हों। इसी तरह यह संभव है कि शहर में रहने वाले बच्चे 20 वर्ष की उम्र के बाद भी अपनी समस्याओं के व्यावहारिक समाधान नहीं सोच पाते हों और उनमें तार्किक चिंतन की क्षमता न हो।

यमुना किनारे बसी बस्तियों या किसी भी नदी के किनारे बसी बस्तियों के 12 वर्ष की उम्र से छोटी उम्र वाले बच्चों को यह मालूम है कि बारिश का मौसम आने से पहले ही अपने किसी और ऊँची जगह जाने की तैयारी कर लेनी चाहिए और क्या साथ ले जाना है क्या छोड़ना है, किन चीज़ों को नुकसान होगा, सबसे पहले खूँटे से बंधे जानवरों को खोलना है ताकि अगर रात में अचानक पानी बढ़ जाए तो जानवर तुरंत सुरक्षित स्थान पर जा सकें और उनके जीवन को कोई खतरा न हो। यह तार्किक चिंतन अपने परिवेश और उससे उपजे अनुभव का परिणाम है। इसी तार्किक चिंतन को हम उसी बस्ती के हर बच्चे के मस्तिष्क में नहीं खोज सकते, क्योंकि यहाँ जीवों के प्रति संवेदनशीलता भी शामिल है। ऐसे अनेक उदाहरण हमारे-आपके आस-पास फैले हुए हैं जो इस ओर संकेत करते हैं कि कोई भी एक सिद्धांत समान रूप से सभी के लिए काम नहीं करता। हम केवल सिद्धांत को मोटे तौर पर देख सकते हैं और उस देखने में इतनी गुंजाइश होती है कि वह सिद्धांत अपेक्षाकृत कम लोगों पर ही ठीक-सा लगता है। एक और महत्वपूर्ण प्रश्न! जीन पियाजे ने जो शोध किया, उसकी भूमि स्विटज़रलैंड की भूमि थी और उन्होंने अपने तीन बच्चों पर प्रयोग करने के उपरांत अपना सिद्धांत दिया। स्विट्ज़रलैंड का परिवेश और उसकी समाज-सांस्कृतिक एवं आर्थिक स्थितियाँ भारत के परिवेश और उसकी समाज-सांस्कृतिक एवं आर्थिक स्थितियों से नितांत भी है। हम यह भी जानते हैं कि परिवेश का व्यक्तित्व निर्माण पर प्रभाव पड़ता है। आपका व्यवहार आपके चिंतन से प्रभावित होता है और आपका चिंतन आपके अनुभवों से और आपका अनुभव एक समाज विशेष में ही लगातार समृद्ध होता जाता है। अत: कोई भी सिद्धांत केवल विचार-भूमि दे सकता है लेकिन अपनी यात्रा के मार्ग हमें स्वयं तय करने हैं।

इस चर्चा का सार तत्व यही है कि किसी भी शैक्षिक सिद्धांत को हम ज्यों-का-त्यों अपनी कक्षाओं में लागू नहीं कर सकते। अगर ऐसा किया तो न तो अपेक्षित परिणाम प्राप्त होंगे और न ही हम बच्चों के सीखने में कोई ठोस मदद कर सकेंगे। अपनी कक्षाओं के लिए अपने सिद्धांत स्वयं गढ़ने होंगे।

प्राथमिक शालाएँ, शोध और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

शिक्षा के लक्ष्य निर्धारित करने के उपरांत उसके क्रियान्वयन या उसकी प्राप्ति के लिए रणनीति तैयार की जाती है और उस रणनीति में पूर्व के अनुभव तथा नवीन चिंतन के शोध की आवश्यकता होती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के पृष्ठ 6 में इस लक्ष्य का उल्लेख

© NCERT not to be republished

करते हुए कहा गया है कि "शैक्षिक प्रणाली का उद्देश्य अच्छे इंसानों का विकास करना है –जो तर्कसंगत विचार और कार्य करने से सक्षम हो, जिसमें करुणा और सहानुभूति, साहस और लचीलापन, वैज्ञानिक चिंतन और रचनात्मक कल्पनाशक्ति, नैतिक मूल्य और आधार हों। इसका उद्देश्य ऐसे उत्पादक लोगों को तैयार करना है जो कि अपने संविधान द्वारा लक्षित –समावेशी और बहुलतावादी समाज के निर्माण में बेहतर तरीके से योगदान करे।"इस बृहत्तर उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि बच्चों के परिवेश और परवरिश पर विशेष ध्यान दिया जाए और उन्हें उत्कृष्ट कोटि का वातावरण प्रदान किया जाए। इससे वे अपनी क्षमताओं का बेहतर विकास कर सकेंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (पृष्ठ 6-7) के मूलभूत सिद्धांतों में से कुछ महत्वपूर्ण बिंदु इस प्रकार हैं —

- हर बच्चे की विशिष्ट क्षमताओं की स्वीकृति, पहचान और उनके विकास हेतु प्रयास
- बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान को सर्वाधिक प्राथमिकता देना
- अवधारणात्मक समझ पर ज़ोर
- रचनात्मक और तार्किक सोच को प्रोत्साहन
- नैतिकता, मानवीय और संवैधानिक मूल्य
- बहुभाषिकता और भाषा की शक्ति को प्रोत्साहन
- तकनीकी के यथासंभव उपयोग पर ज़ोर
- विविधता और स्थानीय परिवेश के लिए सम्मान
- उकृष्ट स्तर का शोध

इन सभी आधारभूत सिद्धांतों के मूल में एक बिंदु निहित है कि शिक्षा में निवेश की प्रक्रिया प्रारंभिक स्तर से ही हो जानी चाहिए, क्योंकि बच्चों के मस्तिष्क का 85 प्रतिशत विकास 6 वर्ष की अवस्था से पूर्व ही हो जाता है (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, पृष्ठ 9)। यही कारण है कि इस अवस्था वाले बच्चों के सामाजिक-आर्थिक परिप्रेक्ष्य को बहुत स्पष्ट रूप से जान लेने पर बल दिया जाता है। बच्चों की बुनियादी साक्षरता एवं संख्या बोध संबंधी कुशलताओं को महत्वपूर्ण बताते हुए कक्षायी प्रक्रियाओं को सुनियोजित रूप से बेहतर बनाने पर बल देती है और यह कहती है कि यह क्षमता " स्कूली शिक्षा में और जीवन भर सीखते रहने की बुनियाद रखती है" (राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, पृष्ठ 11)।

शिक्षा के संदर्भ में यह ज़रूरी है कि बच्चों की अवधारणात्मक समझ पर ज़्यादा ध्यान केंद्रित किया जाए और रटंत शिक्षा को निरुत्साहित किया जाए। यह समझ ही तार्किक चिंतन और न्याय संगत समाज के निर्माण में सहयोग देगी। भाषा, बहुभाषिकता और माध्यम भाषा का मुद्दा अत्यंत ज्वलंत और चुनौतीपूर्ण है। प्राथमिक स्तर पर बच्चों की घर की भाषा मातृभाषा में ही अवधारणाएँ बनती हैं, अत: यह आवश्यक है कि बच्चों की मातृभाषा को माध्यम भाषा बनाया जाए। इसी के साथ दो और महत्वपूर्ण अवधारणाएँ संबद्ध हैं— विविधता और स्थानीय परिवेश का सम्मान। भाषा और अवधारणा-निर्माण में विविधता का होना तय है, इसलिए कक्षायी प्रक्रिया में दोनों को ही समान रूप से महत्व देना आवश्यक है। नैतिकता, मानवीय और संवैधानिक मूल्य का बीजारोपण भी बाल्यावस्था से हो जाता है। यह सत्य है कि न तो मूल्यों का शिक्षण होता है और न ही मूल्य सिखाए जा सकते हैं। मूल्य केवल अर्जित किए जाते हैं जिसका दायित्व सीखने वाले पर है। जिस तरह से समाज और सामाजिक जीवन बदल रहा है उसमें तकनीकी ज्ञान

© NCERT not to be republished

और तकनीक का उपयोग अपरिहार्य होता जा रहा है। अब हमें वे सभी तकनीकें सीख लेनी होंगी जो बच्चों की शिक्षा में सहायक हैं। इन्हीं बिंदुओं से भारतीय कक्षाओं में शोध की संभावनाएँ देखी जा सकती हैं।

- **प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा**— विविधता भारत की विशिष्ट पहचान है और समाज, संस्कृति, आर्थिक और भौगोलिक पृष्ठभूमि के संदर्भ में यह शोध का विषय है कि भारत के अलग-अलग हिस्सों में बच्चों की परवरिश किस तरह से की जाती है और उन प्रक्रियाओं को कैसे बेहतर बनाया जा सकता है। परवरिश स्वयं में शोध का महत्वपूर्ण विषय है, क्योंकि इससे जुड़े तरीके बच्चों के व्यक्तित्व को निर्धारित करते हैं। घर-परिवार में किस तरह का माहौल है, बच्चों को कितनी स्वतंत्रता दी जाती है, उनकी बात सुनी जाती है या नहीं, उन्हें किसे काम को करने या न करने के कारण बताए जाते हैं या नहीं, लड़कों और लड़कियों की परवरिश में किस तरह का भेद है आदि बिंदु उन बच्चों के लिए आवश्यक तरीके सुझाने में मदद करेंगे। यह भी तय करने में मदद मिलेगी कि जिस तरह की परिस्थितियाँ और संसाधन हैं, उनमें बच्चों को क्या सर्वश्रेष्ठ दिया जा सकता है। यह स्वयं में शोध का विषय है कि बच्चों की अपनी शिक्षा के बारे में क्या राय है— उन्हें कब स्कूल जाना है? वे किस तरह का स्कूल पसंद करते हैं? उनके शिक्षक कैसे हों? उन्हें क्या पढ़ना है, क्या नहीं? वे दिन भर स्कूल में कौन-कौन सी गतिविधियों में शामिल होना चाहते हैं? उन्हें किताब, बस्ता आदि पसंद है या नहीं? इस स्तर की शिक्षा को अनौपचारिक रूप से संपादित करने की अनुशंसा की जाती है लेकिन क्या प्राइवेट और सरकारी स्कूलों में इस नियम का पालन किया जा रहा है या नहीं? वस्तुत: बच्चों की शिक्षा को बच्चों की नज़र से देखने, समझने की ज़रूरत है।
- **भाषा और सीखने की प्रक्रिया**— शिक्षा की प्रक्रिया में भाषा एक महत्वपूर्ण उपादान है। बच्चे अलग-अलग पृष्ठभूमि से आते हैं और उनकी भाषा स्वरूप भी अलग-अलग होता है। बच्चों की बुनियादी साक्षरता के संदर्भ में यह एक महत्वपूर्ण विषय है कि बच्चे अपने मातृभाषा में पढ़ना-लिखना कैसे सीखते हैं। हर भाषा की अपनी कुछ विशिष्टताएँ हैं और यह विशिष्टता मौखिक एवं लिखित–दोनों रूपों में होती है। जो विशिष्टता तमिल भाषा की है वह बंगला भाषा की नहीं है और जो विशिष्टता कन्नड़ भाषा की है वह डोगरी भाषा की नहीं है। इसी तरह से बारेली, निमाड़ी, कोरकू, खड़िया, हो, संथाली, खासी, अंगिका, वज्जिका, गोंडी, नेपाली, भूटिया आदि भाषाओं का अपना विशिष्ट रूप है। इन भाषाओं की लिपि भी अलग है और लिपि भी संशोधित होती रहती है। इतना ही नहीं एक भाषा अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग लिपि में लिखी जाती है। पढ़ना-लिखना सीखने का संबंध लिपि से भी है और भाषा के मौखिक रूप से भी! तो शोध का विषय यह है कि अलग-अलग भाषाओं में बच्चों के पढ़ना-लिखना की प्रक्रिया क्या है। बच्चे पढ़ते-लिखते समय किस-किस तरह का व्यवहार प्रदर्शित करते करते हैं? पढ़ना-लिखना सीखने में बच्चे किस तरह की त्रुटियाँ करते हैं और उनका अपसंकेत विश्लेषण (मिसक्यू एनालिसिस) क्या निष्कर्ष देता है? महाराष्ट्र के वे बच्चे जिनकी मातृभाषा कोरकू है, जब वे मराठी भाषा सीखते हैं तो किस तरह

© NCERT not to be republished

की समस्याएँ आएँगी और उनका क्या समाधान होगा? रोचक तथ्य यह है कि कोरकू भाषा में लिंग की व्यवस्था नहीं है और मराठी भाषा में लिंग की व्यवस्था है। एक कोरकू भाषी बच्चा यह कैसे तय करेगा कि 'आला आहे' भाऊ (भाई) के लिए इस्तेमाल करना है या बहिण (बहन) के लिए और 'आली आहे' किसके लिए? भाषा से जुड़े ऐसे अनेक विषय हैं जो शोध की माँग करते हैं। इतना ही नहीं हर समाज के अनुसार शब्दों के अर्थ-ध्वनि बदल जाती है। किस तरह के शब्दों को ग्रहण करने में बच्चों को दिक्कत का सामना करना पड़ता है, यह उनकी भाषा के सूक्ष्म विश्लेषण से ज्ञात होगा। एक और क्षेत्र है भाषागत शोध का–अलग-अलग क्षेत्रों में रहने वाले बच्चे अपने मित्रों के साथ, अपने परिवार के सदस्यों के साथ और किसी अतिथि के साथ किन-किन विषयों पर बातचीत करना पसंद करते हैं और उनकी बातचीत का कलेवर क्या होता है? उनकी बातचीत में उनके जीवन की चिंताएँ, सरोकार और उनके व्यक्तित्व की अनकही बातों को समझना शोध का विषय है। बच्चे कैसे सोचते हैं या वे जो उत्तर या तर्क देते हैं, उसके पार्श्व में कौन-सा परा संज्ञान (मेटा कोग्निशन) है? भारतीय बच्चों का परा संज्ञान उनके परिवेश से प्रभावित होता है जिसमें उनके अनुभव, अवधारणाएँ आकार लेती हैं।

- **नैतिकता, मूल्य विकास और तार्किक चिंतन** — मूल्य-विकास के तरीकों की खोज से पहले शोध का विषय यह है कि बच्चे जिस समाज का हिस्सा हैं, वहाँ 'अवमूल्यन' किस रूप में है। जिसे ठीक करना है, उसके बारे में यह तो समझ लिया जाए कि वहाँ क्या ठीक नहीं है या वहाँ खराब क्या है? यहाँ फिर से सांस्कृतिक रूप से भिन्न समाजों की बात आती है कि किस समाज में क्या हो रहा है। बच्चे किन कुसंगतियों में फँस गए हैं या फँस रहे हैं? बच्चे किस तरह की व्यसनों या अपराध की दुनिया में बढ़ते चले जा रहे हैं आदि। जब अवमूल्यन का परिदृश्य समझ में आयेगा तब उन विविधताओं को ध्यान में रखते हुए मूल्य विकास कि बात कि जा सकती है। कारण या जड़ अलग है तो उपाय भी अलग होगा और हर बच्चे के लिए अलग उपाय खोजना होगा जिसके लिए बहुत नज़दीक से बच्चों को देखने, परखने और समझने की ज़रूरत है। बच्चे अपने आस-पास घटित होने वाली घटनाओं से किस तरह से प्रभावित होते हैं, अपने लिए क्या 'सबक' हासिल करते हैं और यह कैसे तय करते हैं कि क्या करना, क्या नहीं करना है— इन सबके मूल में तार्किक चिंतन है। यह शोध का विषय है कि जहाँ बच्चे परिवार और स्कूल में यह सीखते हैं कि झगड़ा करना, क्रोध करना गलत बात है। वहीं वे अपने आस-पास बड़ों को झगड़ते, मारपीट करते देखते हैं तो वे उस घटना को किस तर्क के आधार पर सही या गलत ठहराते हैं? किसी काम को करने या ना करने के पीछे उनके क्या तर्क है— यह शोध का विषय है,क्योंकि बच्चे जिस परिवार, समाज से आते हैं, वे अलग हैं। जैसलमेर में पानी के पीछे दो बड़ों में कहा-सुनी हो सकती है लेकिन पानी के पीछे की यह कहा-सुनी उत्तरकाशी में शायद ही हो। कारण यह है कि दोनों जगह का भूगोल अलग है। इसका अर्थ यह है कि नैतिकता, मूल्य विकास और तार्किक चिंतन को बच्चों के परिवारों और समाजों के बीच खोजना और देखना होगा और ये समाज बहुत अलग तरह के समाज हैं।

© NCERT not to be republished

- **तकनीक और कक्षायी प्रक्रिया**— प्रौद्योगिकी किसी भी परिवार, समाज और शिक्षा-संस्थानों का अभिन्न हिस्सा बनती जा रही है। जब से कोविड–19 महामारी का प्रकोप बढ़ा है तब से यानी अप्रैल 2020 से बच्चों की शिक्षा ने ऑनलाइन शिक्षा का रूप ले लिया है। वे बच्चे जिनके घर में मोबाइल,लैपटाप,कंम्यूटर या कोई अन्य उपकरण है, उन्होंने तो ऑनलाइन शिक्षा का लाभ उठाया होगा (यह अलग बात है कि कितना लाभ उठाया होगा) लेकिन उन बच्चों की शिक्षा का क्या हुआ होगा जो दूर-दराज़ के क्षेत्रों में रहते हैं, आदिवासी क्षेत्रों में रहने वाले बच्चों के लिए क्या उनकी भाषा में ऑनलाइन शिक्षा का वास्तविक प्रावधान हो पाया होगा जहाँ न तो पर्याप्त मात्रा में बिजली है और न ही उपकरण? ऐसे बच्चों ने या परिवारों ने या समाज ने उनके लिए किस तरह से शिक्षा का प्रबंध किया होगा? तकनीक और सस्ती कैसे हो सकती है? बहुत छोटे बच्चे जो अभी तकनीकी उपकरणों का प्रयोग करने में सक्षम नहीं हैं तो उनकी ऑनलाइन शिक्षा में अभिभावकों का क्या सहयोग रहा होगा? उनके सामने क्या चुनौतियों आई होंगी? क्या कोई ऐसा तरीका है जो समुदाय शिक्षण (कम्यूनिटी टीचिंग) के रूप में सफल हुआ हो? तकनीक, उपकरण, विषय-वस्तु के साथ-साथ भाषा पर भी विचार करना होगा कि बच्चों को क्या उनकी मातृभाषा में विषय-सामग्री मिल सकी? वे माता-पिता जो स्वयं तकनीक के प्रयोग से परिचित नहीं हैं, उन्होंने अपने बच्चों को तकनीक के माध्यम से कैसे पढ़ाने में कैसे मदद की होगी? एकल अभिभावक और आर्थिक रूप से वंचित वर्ग के माता-पिता के सामने किस तरह की चुनौतियाँ आई होंगी और उनका निवारण कैसे क्या गया होगा? प्राथमिक स्तर के वे बच्चे जो अभी पढ़ना-लिखना सीख रहे हैं,उन्होंने शिक्षक की सहायता के बिना तकनीक के माध्यम से पढ़ना-लिखना कैसे सीखा हगा?
- **उकृष्ट स्तर का शोध**— यह स्वयं में शोध का विषय है कि उत्कृष्ट शोध की अवधारणा क्या है। क्या एक बच्चे, एक कक्षा, एक विद्यालय, एक परिवार को शोध का विषय बनाया जा सकता है? हाँ। इसका मुख्य कारण यह है कि शोध में गहनता मायने रखती है और एक लंबे समय के लिए एक बच्चे (उदाहरण के रूप में) को केंद्र में रखते हुए शोध किया जाता है तो उससे प्राप्त निष्कर्ष उस बच्चे के लिए तो उपयोगी होंगे ही, साथ ही उसी की तरह के अन्य बच्चों के लिए भी मार्ग प्रशस्त होता है। समान रूप से तो नहीं लेकिन कुछ मामलों में मदद मिल सकती है। उदाहरण के लिए एक बच्चे पर एक लंबे समय तक शोध किया गया कि पाँच वर्ष के बच्चे की बातचीत के विषय और कलेवर क्या होता है। इससे प्राप्त निष्कर्ष से यह तो ज्ञात हुआ कि बच्चे के बातचीत के विषय थे— खेल, घूमना, कार्टून के पात्र आदि। अब ये विषय किसी भी पाँच साल के बच्चे की बातचीत के हो सकते हैं, होंगे ही यह ज़रूरी नहीं है। लेकिन इन विषयों के अतिरिक्त और भी विषय हो सकते हैं, और इन विषयों पर बातचीत का कलेवर भी अलग होगा, अलग भाषा में होगा। खेल अलग-अलग तरह के हो सकते हैं, घूमे की जगह अलग हो सकती है कार्टून के विषय अलग हो सकते हैं और यह भी संभव है कि किसी क्षेत्र के बच्चों की बातचीत का विषय कार्टून हो ही ना, क्योंकि

© NCERT not to be republished

उसके घर में टीवी है ही नहीं, बिजली है ही नहीं! अतः शोध के विषय और उसके न्यादर्श का चयन बहुत समझकर किया जाना चाहिए। शोध के विषय ऐसे हों जो हमें अपनी कक्षायी प्रक्रियाओं को परिष्कृत करने में और नई दिशा में सोचने में मदद करें। शोध से प्राप्त निष्कर्षों की शैक्षिक उपादेयता या निहितार्थ हों।

उपसंहार

प्राथमिक शालाएँ इस रूप में शोध की समृद्ध भूमि हैं, क्योंकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की अनुशंसाओं में इस स्तर पर बहुत ध्यान दिया गया है। फिर चाहे वह प्रारंभिक बाल्यावस्था हो या बुनियादी साक्षरता और संख्या बोध या फिर मातृभाषा में पढ़ाने की अनुशंसा। नीति में प्रारंभिक स्तर पर तकनीक का प्रयोग करने पर बल दिया गया है। यह अपने आप में शोध का विषय है कि तकनीक का प्रयोग इस स्तर के बच्चों की शिक्षा के लिए किस तरह से किया जा सकता है, जबकि चुनौतियाँ अनेक हैं।

बच्चों का समाज-सांस्कृतिक और भाषायी परिप्रेक्ष्य अलग है, विविध है और अनेक तरह की जटिलताओं, सुगमताओं तथा चुनौतियों से 'भरा' हुआ है। तब कहाँ एक शोध हर तरह के बच्चे के लिए, हर तरह के परिवार के बच्चे के लिए, हर तरह के समाज के बच्चे के लिए एक ही समाधान दे सकेगा? भारतीय बच्चों का समाज और व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धान्त सदैव स्मरण रहे, जब भी शोध की उर्वर भूमि में अंतर्निहित संभावनाओं को तलाशना हो, उनकी पड़ताल करनी हो।

संदर्भ

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. शिक्षा मंत्रालय.भारत सरकार.

जीन पियाजे थ्योरी ऑफ कॉगन्टिव डेवलपमेंट इन हिंदी.studydysafer.com/jean-piaget-theory-of-cognitive-development-in-hindi. 30 दिसबंर 2020 को देखा गया.

© NCERT not to be republished